REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 12 | ISSUE - 9 | JUNE - 2023

शिवमूर्ति के कहानी साहित्य का अध्ययन

सीमा कुशवाहा[1] , डॉ. उर्मिला वर्मा[2]
[1]शोधार्थी, हिन्दी विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.).
[2]प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष हिन्दी, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.).

सारांश –

कहानी हर साहित्यकार की सबसे प्रिय विधा होती है। शिवमूर्ति भी इस विधा के लेखन में हस्तदक्ष रहे हैं। उन्होंने कहानी साहित्य के जगत में एक बड़ी उपलब्धि हासिल की है। उनके साहित्य का महत्वपूर्ण पहलू कहानी विधा है। प्रेमचंद के समान उन्होंने भी अपनी कहानियों का कथ्य सामाजिक धरातल पर उकेरा है। उन्होंने अपनी कहानियों में गरीबी, ग्रामीण क्षेत्र, दलित समस्यायें, स्त्री की वकालत आदि भावनाओं को विषय बनाया है। कहानी विधा के रूप में मानो लोक जीवन को अपने साहित्य में रूपायित किया है।

मुख्य शब्द – साहित्यकार, कहानी, सामाजिक एवं समस्यायें।

प्रस्तावना –

साहित्यकार शिवमूर्ति के साहित्य की विशेषता यह है कि किसी भी देश काल में अवस्थित होते हुए भी उनकी रचनायें समय के अनुरूप गमन करती हुई प्रतीत होती हैं। उनका साहित्य अमूर्त सत्ता से जोड़ने वाला है। शिवमूर्ति का साहित्य सामान्य से अलग हटकर है, उनकी रचनाएं विशिष्ट कछुए को समेटे हुए हैं। उनके गद्य में जीवंतता बरकरार रहती है। उनकी संवदेनाएं और अनुभव अत्यधिक गहरें हैं। उनकी रचनाओं का परिवेश जमीनी वातावरण से जुड़ा हुआ है। उनका साहित्य ग्रामीण जीवन शैली से ओत–प्रोत है। उनकी रचनाओं में प्रेमचन्द और फणीश्वर नाथ रेणु के समान व्यापक परिवेश भले ही न हो लेकिन ग्राम्य जीवन शैली की आंतरिक और बाह्य प्रकृति का चित्रण उन्होंने गहराई और सूक्ष्मता के साथ किया है। हिन्दी साहित्य जगत में प्रेमचन्द और फणीश्वरनाथ रेणु के बाद शिवमूर्ति ही एक ऐसे साहित्यकार हैं जिनकी समस्त रचनाएं ग्राम्य जीवन की सूक्ष्मताओं का वर्णन प्राप्त होता है। अनेक साहित्य में जो आत्मीयता, वस्तुनिष्ठा और समरसता दिखाई देती है वह अन्यत्र दुर्लभ है। उनके साहित्य का विशेष अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि प्रेमचन्द के समकालीन साहित्यकारों में उन्होंने एक कदम आगे का ही दर्जा बनाया है। उनके साहित्य में सामान्य जीवन की वास्तविकताओं का सूक्ष्म चित्रण प्राप्त होता है जिसके अध्ययन से ज्ञात होता है कि उनके काव्य में कला के प्रति उतना आग्रह नहीं है जितना धरती की गंध के प्रति है। शिवमूर्ति धरती के रूप रस, गंध और सरसता के प्रति अत्यंत सचेत रहे हैं। वह मानव इस वातावरण में स्वयं को विलीन सा कर लेते हैं। अपने चारों ओर के वातावरण के प्रति एकरस हो जाते हैं। वह अपने चारों ओर व्याप्त ग्रामीण जनता की भावनाओं को, उनके

आदर्शों को, उनके विश्वास, हास–परिहास, आशा और आकांक्षाओं को मानो स्वयं अनुभव करते हुए अपने शब्दों में अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं। ऐसा लगता है जैसे मानव मात्र के जीवन की डोर को पकड़कर उसे सहज और सरल अभिव्यक्ति प्रदान करने में उन्होंने दक्षता हासिल कर रखी है। यही कारण है कि उनकी सभी कहानियों और उपन्यासों का कथ्य अपने देश की मिट्टी की गंध से महक उठा है। उनके कथ्य की यह खुशबू और अधिक व्याप्त हो इसके लिए जैसे पवन के झोंकों की भी अपेक्षा नहीं होती बल्कि वह खुशबू स्वयं ही गति धारण करते हुए चारों ओर परिव्याप्त हो जाती है। यही उनकी रचना प्रक्रिया की विशेषता है।

शिवमूर्ति अपने परिवेश, प्रकृति और जिनके बीच उनके उठना बैठना होता है उनके क्रियाकलापों तथा मनोदशाओं से इतना परिचित हैं बल्कि कहिये इतना तादात्म्य स्थापित कर चुके हैं कि इन सबके चित्रण में सूक्ष्म से सूक्ष्म चित्रण भी छूट नहीं पाता। उनके साहित्य में ग्रामीण जीवन का जीता जागता चित्र अपनी समस्त बारीकियों के साथ उपस्थित होता है। ऐसे जीवन धार्मिक, साहित्यकार के व्यक्तित्व और कृतित्व के प्रति चिंतन मनन और गहराइयों के साथ उनका अवलोकन अपेक्षित है। किसी भी साहित्यकार का साहित्य न केवल उसके स्वयं के जीवन की अनुकृति होता है वरन् उसके समकालीन सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, नैतिक, प्राकृतिक परिवेश के समष्टिगत वातावरण की भी अभिव्यक्ति होता है। निश्चित ही शिवमूर्ति के कथा साहित्य में उनके आसपास के वातावरण का चित्रण सहज ही परिलक्षित होता है जो उनकी रचनाओं में देखने को मिलता है। उनके व्यक्तित्व एवं जीवन की संघर्ष रेखा के द्वारा उनकी सामाजिक चेतना को जाना जा सकता है क्योंकि किसी भी साहित्यकार का व्यक्तित्व एवं जीवन संघर्ष उसके आंतरिक और बाह्य कृतित्व की समग्र अनुकृति होता है। व्यक्तित्व और जीवन संघर्ष के माध्यम से हम किसी भी साहित्यकार के कार्य व्यवहार को, उसके दृष्टिकोण को, जीवन परिस्थितियों को, आदर्शों को, उसकी भावनाओं को सहजता से जान पाते हैं। प्रसिद्ध साहित्यकार शिवमूर्ति का हिन्दी साहित्य जगत में विशेष योगदान है। समकालीन कथा साहित्यकारों में इनका विशेष और महत्वपूर्ण स्थान है।

विश्लेषण –

केशर कस्तूरी (1991), कुच्ची का कानून (2017)। इसके अतिरिक्त इनकी दो कहानियों का पता चलता है जो अभी अनुपलब्ध है। प्रथम कहानी 'पानफूल' जो (1969) में वातायना पत्रिका में प्रकाशित हो चुकी थी और दूसरी कहानी कात्यायनी पत्रिका के कथा विशेषांक में उड़ी ओ पक्षी नामक शीर्षक से 1970 में प्रकाशित हुई थी। इसका उल्लेख विवेकी राय ने अपने शोध राय में विशेष रूप से किया है।

केशर कस्तूरी –

पुस्तक का कलेवर को प्राप्त करने वाला 'केशर कस्तूरी' कहानी संग्रह शिवमूर्ति का प्रथम कहानी संग्रह है। उनके इस कहानी संग्रह में उनकी 6 प्रसिद्ध कहानियां संकलित है, जो अलग–अलग वर्षो में प्रकाशित हुई हैं –

1. कसाईबाड़ा (1980)
2. भरतनाट्यम (1981)
3. सिरीउपमा जोग (1984)
4. तिरिया चरितर (1987)
5. अकालदंड (1987) और
6. केशर कस्तूरी (1991)।

शिवमूर्ति जमीनी अस्तित्व से जुड़कर चलने वाले कथाकार रहे हैं, अतः उनकी इन सभी कहानियों में ग्रामीण वातावरण का वह कथ्य जुड़ा है जो सदियों से उपेक्षित होते आ रहे मानव की हकीकत है। इन कहानियों में उस निम्न वर्ग की कथा है जो वेदना, पीड़ा और शोषण से निरंतर आहत है उनकी अस्मिता उनके अस्तित्व को नजदीक से अनुभूत करते हुए लेखक ने अपनी लेखनी के द्वारा शब्दों में उतारा है। प्रत्येक कहानी का कथ्य अत्याधिक मार्मिक है।

कसाईबाड़ा (1980) –

शिवमूर्ति की पहली कहानी कसाईबाड़ा का प्रकाशन सन् 1980 में हुआ था। इस कहानी की शुरूआत शनिचरी के अनशन से होती है जो कि ग्रामीण परिवेश की एक नवीन घटना है। इस घटना के द्वारा एक राजनीतिक प्रतिकार को दर्शाया गया है जो कि सामंतवादी व्यवस्था में संभव हो पाना मुश्किल है। भारतीय लोकतंत्र के दलितों, वंचितों के प्रति संवेदनशील न होने पर भी शनिचरी प्रतिरोध के लिए गुंजाइश का इस्तेमाल करती है जबकि ऐसा आवश्यक नहीं कि हाशिये के लोगों का प्रतिरोध सार्थक परिणाम को प्राप्त ही कर ले, किंतु राजनीतिक चेतना के प्रसार के साथ इसमें अपने अधिकारों के प्रति सजगता तथा प्रतिरोध की चेतना का विकास हो रहा है। इस कहानी के लीडर और प्रधान दोनों शनिचरी के साथ छल करते हैं। आदर्श विवाह की आड़ में प्रधान शिरोधर सिंह गरीब परिवार की लड़कियों को बेचता है, जिसका परिणाम, देह व्यापार में परिवर्तित हो जाता है।

कसाईबाड़ा कहानी का शीर्षक बहुआयामी और हृदय को भेद देने वाला है, इसके शीर्षक कसाईबाड़ा में कसाई शब्द का अर्थ है– बेरहम, निर्दई, नृशंस मांस विक्रेता और बाड़ा का अर्थ पशुशाला, हेरा, आहात आदि। कसाई बाड़ा वह स्थल है जहाँ पर पशुओं को हलाल किया जाता है और बेरहमी से उनको मार दिया जाता है। कुछ इसी प्रकार से देश की महिलाओं को, गरीब लड़कियों को बड़ी निर्ममता के साथ बेआबरू किया जाता है और उनकी अस्मिता को लूटकर उन्हें मार दिया जाता है या कहीं पर देह व्यापार को बढ़ावा दिया जाता है। इस वातावरण को शिवमूर्ति ने अपनी कहानी के माध्यम से समाज के सामने रखकर समाज में फैली हुई इस बुराई पर तीखा व्यंग्य कसा है। कहानी में शिवमूर्ति ने अधरंगी, प्रधान, लीडर, शासन व्यवस्था के आधार दरोगा, शनिचरी, परधानिन और लीडराइन को प्रस्तुत कर कहानी का कथानक चित्रांकित किया है।

प्रस्तुत कहानी की कथावस्तु का आरंभ प्रधान के द्वार पर शनिचरी के धरने पर बैठने से होता है। शनिचरी लीडर जी के कहने पर गांधी जी के फोटो को ध्यान में रखकर अनशन पर बैठने के लिए प्रेरित होती है। यूं तो लीडर का यह संघर्ष प्रधान के खिलाफ है। धोखाधड़ी, भ्रष्टाचार, लूट, खसोट आदि का चित्रण लेखक ने बड़ी ही स्पष्टता से किया है।

कहानी में प्रधान के धोखे का शिकार हो चुकी शनिचरी लीडर के भी धोखे की शिकार बनती है। आज की राजनीति का ककहरा भोली भाली जनता को धोखा देना है, जो राजनैतिक राह की वास्तविकता भी है अन्यथा व्यक्ति इस राह पर चलकर एक सफल नेता नहीं बन सकता। अतः इस राजनीतिक तोड़ मरोड़ में शनिचरी को अपनी बलि देनी पड़ती है, जिसके अनशन को तुड़वाने के लिए लीडर शनिचरी का अंगूठा लगवा कर मुख्यमंत्री को उसका प्रमाण प्रदान कर देता है और उसे झूठ मूठ का आश्वासन देकर मुख्यमंत्री के पास जाने की बात कहकर कचहरी चला जाता है। इस सब जालसाजी के मध्य लीडर का प्रमुख ध्येय शनिचरी के खेत को अपने नाम करवाना है। शनिचरी भूख प्यास से पीड़ित होती हुई अनशन पर ही बैठी रहती है जिसे देखकर पूरा गांव आश्चर्यचकित है लेकिन संवेदना के नाम पर कोई उसका साथ देने नहीं आता केवल एक अदभुत अधपगला विकलांग अधरंगी उसके पास आता है जिसका काम ग्रामीण जानवरों को चराना है और वही उसकी रोजी रोटी है। लेकिन वह प्रधान और लीडर के जानवर नहीं चलाता क्योंकि वह दोनों को राहु केतु समझता है, यह सारा वाक्या थाने तक आ पहुंचता है क्योंकि जो सामूहिक विवाह हुआ था उसमें दरोगा और अन्य अधिकारी भी हिस्सेदार थे लेकिन जो नाटक अब शुरू होता है उसमें प्रधान से लेकर दरोगा तक सभी एक दूसरे के पास तहकीकात का खेल खेलते हैं जिसमें दरोगा जी को भी मौज मस्ती का एक अच्छा अवसर प्राप्त हो जाता है। लेकिन वह कहते हैं न कि, पाप का घड़ा कभी भी न कभी भरता है। अतः दरोगा के कथन से ही तहकीकात की पोल खुल जाती है, वह कहता है– ''मैं शिकार खेलने आया हूँ न कि जिरह सुनने'।'[1] तब अतरंगी पुलिसिया सारी प्रतिक्रियाओं की बखिया उधेड़ देता है और कहता है कि – ''आदमी का शिकार करके पेट नहीं भरा तो चिराई का शिकार करके नहीं भरेगा दरोगा बाबू।''[2]

शिवमूर्ति ने इस कहानी के माध्यम से नारी चेतना को शनिचरी, परधानिन, लीडराईन के माध्यम से स्पष्ट किया है। परधानिन और लीडराईन पूर्व में भले ही चुप रहे हैं लेकिन उसकी आवाज बनकर परधानिन और लीडराईन समाज में हो रहे दुष्कर्म का विरोध करते हैं। शिवमूर्ति ने उन्हीं के माध्यम से नारी चेतना को स्पष्ट किया है।

भरतनाट्यम (1981) –

भरतनाट्यम शिवमूर्ति की एक नई सामाजिक विसंगति को समेटे हुए, संयुक्त परिवार की विभिन्न परेशानियों से युक्त, देशकाल आदि को स्पष्ट करने वाली, पक्षपाती नीतियों से ओतप्रोत विशिष्ट कहानी है। इस कहानी में एक ऐसे युवक की कथा निहित है, जो पढ़ा–लिखा बेरोजगार है पर समाज की विभिन्न प्रकार की विसंगतियों से थक चुका है। यदि वह नैतिकता की ओर चलता है तो उसकी आकांक्षाएं, उसकी कल्पनाएं मृत्यु के घाट उतरती है और उन्हें पूरा करने चलता है तो आत्मा की आवाज के विरूद्ध खड़ा होता है। वह अपनी पत्नी को खुश करने के लिए और बेरोजगारी से निजात पाने के लिए घूस देकर मिट्टी के तेल का लाइसेंस लेता है लेकिन जब अपने स्वाभिमान को गिरवी रखकर वह घर लौटता है तो उसके पैरो तले जमीन खिसक जाती है क्योंकि उसे ज्ञात होता है कि उसकी पत्नी दर्जी के साथ भाग गई है। ऐसी विकट परिस्थिति उसके ऊपर पहाड़ गिरने जैसी है। दूसरी ओर घर में बूढ़े पिता की बड़ी–बड़ी लालसाएं कल्पनाएं बेटे को चारों ओर से घेरे रहती है। उसकी बेरोजगारी उसके सम्मान और इज्जत पर बहुत बड़ा धब्बा है, उसकी बच्चियां भाई के बच्चों के द्वारा पिए गए दूध के गिलास को चाटकर अपनी लालसा को तृप्ति करती है। पत्नी की लालसा अधिक बड़ी है, अतः बेटे को प्राप्त करने की इच्छा पूर्ति के लिए वह अपने जेठ के साथ सहवास करती है, जिस देखकर उसका पति चुप रह जाता है और उसे उस क्षण अनुभूति होती है कि वह बेरोजगार है, उसके लिए ही उसे इतनी बड़ी कीमत चुकानी पड़ रही है।

निश्चित ही भरतनाट्यम कहानी में ऐसे परिवारों की कहानी को उजागर किया है जहां चारों ओर मुसीबतों का जंजाल है और एक व्यक्ति नैतिकता और आदर्श के रास्ते पर चलना चाहता है लेकिन उसकी परिस्थितियां उसे चारों ओर से गिरा देती हैं। इस कहानी में शिवमूर्ति ने बेरोजगारी की समस्याओं को उजागर किया है। संयुक्त परिवार में जो विसंगतियां व्याप्त होती है उनका स्पष्ट चित्रण किया है और देश काल की विविध समस्याओ को चित्रित किया है।

सिरी उपमा जोग (1984) –

शिवमूर्ति अपने जीवन में सदा से ही गरीब जनता के प्रति संवेदनशील रहे हैं। उन्होंने अपने जीवन में हर प्रकार के संघर्ष को सहा है, अपनी माता का संधर्ष उन्होंने देखा है, अपनी पत्नी के संघर्ष को उन्होंने जिया है। अतः किसी स्त्री के संघर्ष को देखकर वह चुप नहीं रह पाते 'सिरी उपमा जोग' एक स्त्री के संघर्ष की कहानी है। लालू की मां की कहानी है जिसमें एक ऐसी गरीब, बेबस, ग्रामीण स्त्री की कहानी है जो स्वयं मेहनत करके अपने पति की इच्छा को पूरा करती है। पति को शिक्षित बनाती है। एक अच्छे अधिकारी के लक्ष्य पर पहुंचाती है, लेकिन स्वयं अंधेरे में रह जाती है। उसका पति अधिकारी बनने पर न्यायाधीश की लड़की के साथ दूसरी ब्याह रच लेता है और फिर लालू की माँ की दुर्दशा शुरू होती है। सगा चाचा उसके चरित्र पर लांछन लगाता है। वह चारों ओर अंधेरों में घिर जाती है। वह अंधेरा ही उसे हर प्रकार से खाने को दौड़ता है। उसको वेदना और पीड़ा देता है। लेकिन जिस पति को उसने रोशनी दी है वह पलट कर उसे कुछ नहीं दे पाता। यह वेदना उसको जीवन भर खाती है। 'सिरी उपमा जोग' कहानी में शिवमूर्ति ने ग्रामीण नारी की मार्मिक संवेदना को स्पष्ट करते हुए संघर्षरत नारी की असहाय परिस्थितियों को भी उजागर किया है।

उसे डर है कि बेटी कमली की तय शादी में भी चाचा अडंगा डालेंगे। अतः वह पत्र के साथ लालू को शहर भेजती है। किंतु पत्र लेकर गया भूखा प्यासा बेटा लालू सौतेली बहन से ही चोटिल होकर लौटता है। पति को स्मृतियां सताती है, वह जानता है कि ममता (दूसरी पत्नी) के रहते वह गांव की ओर उन्मुख नहीं हो पाएगा – ''पहले यह बताइए, वह है कौन? एकाएक ममता का स्वर कर्कश और तेज हो गया। उस चुड़ैल की औलाद तो नहीं जिसे आप गाँव का राज पाठ दे आएं हैं? ऐसा हुआ तो खबरदार जो उसे गेट के अंदर भी लाए, खून पी जाऊंगी।''[3] और ''सबेरे उठकर उन्होंने देखा तो चबूतरे पर गांव नहीं था। उन्होंने चैन की सांस ली।''[4] इस प्रकार शिवमूर्ति ने सिरी उपमा जोग कहानी में ग्रामीण नारी की मिटती हुई थाती को अभिव्यक्त किया है जिसके चलते एक नारी के हृदय पर, उसकी भावनाओं पर, उसके विश्वास पर कठोर कुठाराघात हुआ है जिसके बाद समाज से कुछ भी प्राप्ति की लालसा अथवा सहायता व्यर्थ नजर आती है। स्त्री विमर्श की दृष्टि से लालू की माँ एक सशक्त नारी चरित्र है, जो इतनी कठिन परिस्थितियों में भी साहस नहीं छोड़ती और जीवन के हर मोड़ पर डटकर खड़ी होती है और हर परिस्थिति का सामना करती है।

अकालदंड –

शिवमूर्ति की कहानियों का कथानक सामाजिक धरातल पर, उसकी विडंबनाओं पर आधारित है। इसी के अनुरूप 'अकालदंड' कहानी भी ग्रामीण वातावरण पर आधारित एक ऐसी कहानी है जिसमें अकालग्रस्त गांव की दयनीय स्थिति को उकेरा गया है। यूं तो सरकार राहत कार्य के माध्यम से जनता को विभिन्न प्रकार से सहायता पहुंचाती है लेकिन प्रस्तुत कहानी में शिवमूर्ति ने इस बात को भी अभिव्यक्त किया है कि जो सहायता सरकार के द्वारा मनुष्य तक पहुंचनी चाहिए उसका आधा हिस्सा भी गरीब जनता को प्राप्त नहीं हो पाता। क्योंकि सभी उच्च वर्ग के लोग हड़प जाते हैं। गांव में हर तरीके का भेदभाव फैला हुआ है। केवल मातंबर लोगों का दबदबा है, जिसका सेक्रेटरी खुलकर फायदा उठाना चाहता है। फलस्वरूप गरीब मजदूर स्त्रियों का शोषण भी करता है। सुरजी नाम की एक महिला अपनी गरीबी के कारण ही सेक्रेटरी के यहां आधी मजदूरी पर कार्य करने को विवश है, जिसका फायदा उठाकर सेक्रेटरी उसके साथ दुष्कर्म भी करना चाहता है। सुरजी इसका विरोध करती है और हांसिये से सेक्रेटरी के देह के नाजुक हिस्से को शरीर से अलग कर देती है। उसका यह आक्रोश उस दुष्कृत्य का दंड है, जो हर नारी के लिए असहनीय है। सुरजी के द्वारा दिया गया सेक्रेटरी को यह दंड उसके अंत का कारण बनता है, जिसके कारण सुरजी अपने आप को असुरक्षित महसूस करती थी। इस कहानी के माध्यम से शिवमूर्ति ने समाज में फैली हुई कुदृष्टि को पाठकों के सामने रखा है और सुरजी के चरित्र के माध्यम से ग्रामीण परिवेश में स्त्रियों की जागरूकता को स्पष्ट किया है।

तिरिया चरित्तर –

मुंशी प्रेमचंद के समान ही शिवमूर्ति ने अपनी प्रत्येक कहानी का कथ्य सामाजिक धरातल से उठाया है। उन्होंने समाज में व्याप्त विभिन्न प्रकार की विसंगतियों में छुपी हुई गहरी संवेदनाओं को अपनी कहानी का केन्द्र बनाया है। तिरिया चरित्तर कहानी में उन्होंने आज के युग में भी किस प्रकार इंटरनेट, सूचना क्रांति और नारीवादी आंदोलनो से ग्रामीण भारत में नारी पर अमानवीय क्रूरता ढाई जाती है इसकी दारूण कथा प्रस्तुत की है। कहानी की नायिका अवध अंचल में अनजानी बिसुई नदी के किनारे के एक गांव की विमली है, जो अपने भाई भावज से अलग हो जाने के बाद अपने बूढ़े माता–पिता का पालन पोषण करने के लिए गोबर–झाड़ू और चौंका बर्तन करती है लेकिन जब इससे भी घर का गुजारा नहीं चलता तो वह मात्र 9 वर्ष की अल्प आयु में ईंट के भटठे पर काम करने का साहसिक निर्णय लेने को तैयार हो जाती है और उसका यह निर्णय काफी हद तक घर की दरिद्रता को समाप्त कर देता है। ईंट के भट्ठे पर बहुत से लोग विमली को मिलते हैं जैसे डरेवर बाबू, बिल्लर, खान साहब, पांडे, खालसी, कुईसा बोझवा आदि जिनका प्रेम स्नेह और अपनापन उसे सराबोर कर देता है। ईंट के भट्ठे पर केन्द्रित यह कहानी अपने पूर्वार्ध में अत्यधिक रमणीय है।

शिवमूर्ति ने एक–एक पात्र का चित्रण नाजुक तूलिका से स्पष्ट किया है। खासकर कुइसा बोझवा का चरित्र मन को गहराई तक छूता है। बचपन में ही ब्याह दी गई विमली का पति सीताराम अपने पिता बिसराम से झगड़कर व्यापार हेतु परदेश चला जाता है। मेले में हाथ पर पति के नाम का गोदना गुदाने वाली विमली ने अनजाने पति के लिए अपने को यत्नपूर्वक बचाकर रखा है। विमली का ससुर बिसराम अपनी बेटे की बिना ही विमली को गौन करके अपने घर ले आता है और पुत्र के न होने पर बहू के साथ में दुष्कर्म करने की सोचता है। एक बार विफल होने के बाद वह विमली को अफीम खिलाकर उसके साथ दुष्कर्म करता है। जब विमली होश में आती है तो बिसराम को मारने के लिए मिटटी का तेल छिड़क करके आग लगा देना चाहती है लेकिन विमली अपने प्रयास में असफल हो जाती है। उधर बिसराम को पुजारी का संरक्षण प्राप्त हो जाता है। अस्मिता खोई हुई विमली अपने पति के पास मिलने के लिए कलकत्ते के लिए निकल पड़ती है। बिसराम अपने जघन्यतम पाप को समाप्त करने के लिए विमली पर गहने चोरी कर प्रेमी के साथ भाग जाने का झूठा आरोप लगाता है जिसे सुनकर गांव वाले विमली को रेल से पकड़ कर ले आते हैं और पूरे गांव में पंचायत के सामने उसे अपराधी घोषित कर देते हैं। विमली को दंडित किया जाता है और उसे जमीन पर पटक दिया जाता है, ससुर बिसराम गरम कर छोले कर पुत्र वधु के माथे पर दाग देता है जिससे जलती बिलखती हुई विमली चीख चीखकर बेहोश हो जाती है, बच्चे और कुत्ते रोने लगते हैं।

तिरिया चरित्तर पुरूषस्य भाग्यं, देवो न जानाति कुतो मनुष्य : श्लोक के आचरण और सहमति में अनेक हिलते सिरों के साथ कहानी समाप्त होती है। कहानी का दुर्दांत हर पाठक के हृदय में प्रश्नचिन्ह खड़ा कर देता

है। क्यों एक नारी के साथ यह जघन्य अपराध होता है? क्यों उसकी अस्मिता को लूटा जाता है? क्यों समाज उसकी बेबसी का फायदा उठाता है? और क्यों एक दोषी को सजा नहीं दी जाती? इस सबसे पीछे गलत कौन है? हम या हमारा समाज। इन्हीं प्रश्नों की जिज्ञासा के साथ कहानी का दुःखद अंत हो जाता है।

केशर कस्तूरी –

शिवमूर्ति जमीनी कथाकार हैं। जिन्होने अपने आसपास के वातावरण से जुड़कर अपनी लेखनी को चलाया है। उनकी लेखनी में संवेदना है, उनके शब्दों में हृदय को हिला देने वाली वेदना है। उनकी प्रत्येक कहानी का कथ्य किसी न किसी सामाजिक विसंगति को लेकर उठा है। संभवतः वह एक ऐसे समय के कहानीकार रहे हैं जिस समय समाज रूढ़ियों, रीति–रिवाजों, प्रथाओं, शोषण गरीबी अत्याचार दुराचार आदि विभिन्न प्रकार की कटु परिस्थितियों से घिरा हुआ था। केशर कस्तूरी भी उन्हीं कहानियों में से प्रसिद्ध एक कहानी है। केशर कस्तूरी शिवमूर्ति की नारी सशक्तीकरण को लेकर लिखी गई एक महत्वपूर्ण कहानी है। पारिवारिक विसंगतियों से जूझ रही केशर के मन में माता–पिता, मौसिया–मौसी के प्रति कोई शिकायत नहीं। उसका पति जो अस्वस्थ है और लाचार भी है वह भी उस पर अविश्वास रखता है। जबकि अविश्वास के कारण उसके भाई–भाभी हैं जो उसे धोखा देते हैं। बंटवारे में कर्ज के बोझ के साथ उस पर बूढ़ी और अशक्त मां का बोझ भी डाल देते हैं। इस कहानी में शिवमूर्ति ने गांव की विसंगतियों, विरूपताओं को स्पष्ट किया है, और ग्रामीण परिवेश के भीतर स्त्री मुक्ति की खोज की है।

केशर एक साहसी महिला है जो मेहनत मजदूरी के साथ अपने पूरे परिवार का भरण पोषण करती है। उसके अटूट संघर्ष को देखकर उसकी सासू का कथन है कि – ''उनकी पतोहू बड़ी मरदाना औरत है। पतोहू अकेले दम पर घर गृहस्थी का सारा कामकाज संभालती है। इसी की सेवा से जिन्दा हूं भइया।''[5] यह केशर की पुरूषोचित दृढ़ता का प्रमाण है। जीवन की विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों को देखकर वह कहती है, ''दुख तो काटने से ही कटेगा बप्पा भागने से और पिछु आएगा। माँ–बाप तो जनम के साथी होते हैं। करम रेख सभी की न्यारी है।''[6] इस प्रकार शिवमूर्ति ने केशर कस्तूरी कहानी में केशर के माध्यम से ग्रामीण नारी सशक्तीकरण को स्पष्ट किया है।

कुच्ची का कानून –

शिवमूर्ति का दूसरा कहानी संग्रह है – कुच्ची का कानून। इस संग्रह में 4 कहानियां हैं – कुच्ची का कानून, ख्वाजा, ओ मेरे पीर, बनाना रिपब्लिक और जुल्मी।

इन कहानी संग्रह में उनकी 'जुल्मी' कहानी को छोडकर समस्त कहानियां उनकी परिपक्वता और लेखन कौशल की मिसाल है। ग्रामीण जीवन का गूढ़, रहस्यमयी शास्त्र रचती हुई प्रत्येक कहानी समाज, संस्कृति, परिवार, राजनीति और सामंती वातावरण के अन्तस में पनपने वाले सूक्ष्म से सूक्ष्म षडयंत्र और आंतक के बारीक से बारीक धागों की बनावट को उकेरती है।

शिवमूर्ति सत्य के प्रतिष्ठापक हैं। उनकी प्रत्येक कहानी सार्वभौमिक सत्य से जुड़ी हुई है। उनकी कहानियों की कथावस्तु की धुरी ग्रामीण वातावरण के संगीन मुददों पर आधारित होती है। इस संग्रह की सर्वप्रथम कहानी कुच्ची का कानून की चर्चा पुस्तक के आवरण पृष्ठ पर शिवमूर्ति ने स्वयं की है वह कहते हैं कि मेरा कहना है कि कोख देकर बह्मा ने औरतों को फंसा दिया। अपीन बला उनके सिर डाल दी। अगर दुनिया की सारी औरतें अपनी कोख वापस कर दे तो क्या ब्रह्मा के वश का है कि वे अपनी दुनिया चला लें? यदि कहें तो यह कहानी के ज्वलंत, बल्कि बिस्फोटक मुददे की भनक दे जाता है, कहानी कोख में नौ महीने रखने वाली और जन्म देने वाली स्त्री की अपनी कोख पर अधिकार से जुड़े सशक्त कथ्य पर केन्द्रित है। ऐसे ज्वलंत मुददों को पाठकों के सामने रखने के कारण ही शिवमूर्ति अपनी कहानियों के माध्यम से प्रकाशन के तुरंत बाद चर्चाओं की गर्माहट में आ जाते हैं।

'कुच्ची का कानून' कहानी की मुख्य पात्र एक विधवा स्त्री है। विवाह के कुछ समय बाद ही उसका पति अकाल मृत्यु के कारण कुच्ची और उसके सास ससुर को बेसहारा छोड़ जाता है। गांव वालों की प्रथा के अनुसार कुच्ची के मायके वाले उसका दूसरा विवाह करना चाहते हैं, लेकिन वह अपने बेसहारा सास–ससुर को प्रेम और अपनत्व के कारण कुछ दिन रोकना चाहती है जिसमें उसका कोई स्वार्थ नहीं है। पति की मृत्यु संतान

के उत्पन्न होने से पहले ही हो जाती है। फलतः संपत्ति का वारिस कौन होगा? इस पर चचेरे जेठ नजर गड़ा कर संपूर्ण संपत्ति को हथियाना चाहते हैं और इस पर प्रयास करना शुरू कर देते हैं। उनका कुच्ची को अपने प्रेम जाल में फंसाना असफल हो जाता है। हर मोर्चे पर संघर्ष करने वाली कुच्ची परिस्थितियों से तंग आकर बिना पिता के ही वैधानिक नाम के अकेली मां बनने का फैसला लेती है। यह फैसला उसका अमोघ अस्त्र है, अपने अधिकार की प्राप्ति का, जो गांव वालों को किसी भी हाल में नागुजर है। सातवीं पास कुच्ची तमाम तर्क और दृष्टांतों से पुरूष दंभ से भरे मर्दवादी समाज को निरूत्तर कर देती है, मुझे जरूरत लगी महराज। मेरा आदमी तो एक बार मरकर फुरसत पा गया लेकिन बेसहारा समझकर हर आदमी किसी न किसी बहाने मुझे रोज मार रहा था। मैं मरते–मरते थक गई तो जीने के लिए अपना सहारा पैदा कर रही हूं। तो तुझे दूसरी शादी करने से किसने रोका था? दूसरी शादी कर लेती तो मेरे सास–ससुर बेसहारा हो जाते बाबा। अपने सहारे के लिए उनको बेसहारा छोड़कर जाते नहीं बना। मेरा रिश्ता मेरे आदमी तक ही तो नहीं था। लेकिन तू बजरंगी की ब्याहता है। तेरी कोख पर सिर्फ बजरंगी का हक बनता है। मरे हुए आदमी के काम तो यह कोख आ नहीं सकती बाबा। उनके मरने के बाद किसका हक बनता है? दूसरा मर्द करेगी तो उसका हक बनेगा।

दूसरा मैने किया नहीं तो किसका बनेगा? ''मेरी कोख पर मेरा हक कब बनेगा''[7], कहानी कुच्ची के गर्भ की जानकारी से ही आगे बढ़ती है जिसकी वैधता उसे साबित करनी है, क्योंकि पति बजरंगी दो साल पूर्व छल से पिलाए गए जहरीली शराब के सेवन से मर चुका है। कुच्ची के सामने चुनौतियों का पहाड़ है। पंचायत में स्मृति, पुराणों मनुवादी विधानों का हवाला देकर कुच्ची को गलत साबित करने की तमाम कोशिशें की जाती है। लेकिन कुच्ची अडिग है। शिवमूर्ति ने कुच्ची के व्यक्तित्व को निडर, साहसी और अडिग दिखाया है। वह अपने साहस के बल पर अपनी कोख का अधिकार समाज के बीच में प्राप्त करना चाहती है और इसके लिए प्रयासरत हो जाती है। हालांकि शिवमूर्ति की कहानी का यह तथ्य कदाचित लेखक की आदर्श समाज की चाह का परिणाम हो सकता है या यथार्थ का अगला पड़ाव हो सकता है किंतु आज का सत्य प्रतीत नहीं होता।

ख्वाजा, वो मेरे पीर –

'ख्वाजा वो मेरे पीर' कहानी ग्रामीण जीवन की वास्तविकताओं की दारूण परिस्थितियों को अभिव्यक्त करने वाली, संवेदनाओं की जीवंत अभिव्यक्ति और शिवमूर्ति के लेखन की बेजोड़ मिसाल है। उपेक्षा, गरीबी, अशिक्षा, अपनापन, अविकास, असत्य, परंपराएं, अवसाद, दुष्चक्र में फंसे ग्रामीण समाज में पति–पत्नी के वियोग की कारूण कहानी है।

शिवमूर्ति एक ऐसे परिवेश के कथाकार रहे हैं जहां का ग्रामीण जीवन विकट परिस्थितियों में जीवन व्यतीत करता है, अतः उनकी कहानियों में वह वातावरण किसी न किसी रूप में अभिव्यक्त हो ही जाता है। वहां के पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियां जितनी जीवंत और सशक्त रूप में आई है उतनी शायद हिंदी जगत के किसी अन्य कहानीकार की कहानियों में नहीं। प्रस्तुत कहानी में सामाजिक अत्याचार और लाचारी के शिकार मामा–मामी का मस्तिष्क अपनी कथित परम्पराओं की रक्षा करने में व्याप्त है और इसी के अनुकूल अपने वचनों की रक्षा में मामी आजीवन विधवा का जीवन जीने के लिए विवश हो जाती है और मामा अंत तक एकांकी उपेक्षित अनंत पीड़ा से भरा जीवन जीने के लिए। यह कहानी अंतहीन दारूणता, वेदना का महाप्रमाण है। कहानी में पति पत्नी दोनों ही जीवित हैं लेकिन अपने आदर्श और वचन के घेरे में अपने अपने हिस्से का अभिशप्त जीवन जीने के लिए विवश हैं। यह कहानी उस परिवेश की पीढ़ियो के जमीनी सत्य को अभिव्यक्त करती है जहां पर अपने आदर्श में फंसकर व्यक्ति स्वयं को वेदना के घेरे में डाल देता है। यह कहानी उस वातावरण की कई पीढ़ियों की जमीनी वास्तविकता का सजीव चित्रांकन करती है। सरकारी नीतियों में अक्सर ऐसा होता है कि विभिन्न ग्रामों के विकास को यूं ही छोड़ दिया जाता है मानो उनकी ओर देखना भी नहीं है, ऐसी ही उपेक्षा ने देश के कई गांवों और अंचलों को इस हद तक उपेक्षित, कर दिया है कि विकास की धारा से अलग कर एकदम अलग–थलग कर दिया है। इसकी एक बानगी इस कहानी का अंचल है। जहां के लोग नारकीय जीवन जीने को विवश हैं। एक उद्धरण के अनुसार – ''माधोपुर से शिवगढ़ तक सड़क पास हो गई। तो सरकार ने आखिर मान ही लिया कि ऊसर जंगल का यह इलाका भी हिन्दुस्तान का ही हिस्सा है। पिछले पचास बरस में कितनी दरख्वास्तें दी गई। दरख्वास्त देने वाले नौजवान बूढ़े हो चले तब जाकर.....।''[8] शिवमूर्ति अपनी कहानियों में सीधे पात्रों पर

नहीं आते, पहले उस परिवेश के भूगोल और इतिहास को इस तरह गहराई में जाकर उकेरते हैं, कि पाठकों के सामने पिछली कई पीढ़ियां जीवित होने लगती है।

बनाना रिपब्लिक –

'बनाना रिपब्लिक' शिवमूर्ति की सर्वाधिक सशक्त एवं ओजस्वी कहानी है। इसे इक्कीसवीं सदी में दलित चेतना के उत्थान की सर्वाधिक आधुनिक कहानी कहा जा सकता है। उत्तरप्रदेश में 80 के दशक के बाद प्रारंभ हुए दलित चेतनत्व की समग्रता में अंतर्विरोधों के सहित उन्हें शिवमूर्ति की कहानियों में क्रमशः देखा जा सकता है। वास्तविकता को उसके यथार्थ रूप में अनुभव कर सृजन के क्रम में शिवमूर्ति का यह वक्तव्य चिंतनीय है – मेरा नजरिया किसी पूर्व निर्धारित सोच या विचारधारा से नियंत्रित नहीं होता। जीवन को उसकी समग्रता और निश्छलता में जीते हुए ही मेरे रचनात्मक सरोकार आकार ग्रहण करते हैं। पहले का यथार्थ यह था कि कसाईबाड़ा की हरिजन स्त्री सनीचरी धोखे जबरदस्ती से मार दी जाती थी। उसकी खेती–बाड़ी हड़प ली जाती थी। आज का यथार्थ 'तपर्ण' में है। सनीचरी जैसे चरित्रों की अगली पीढ़ी रजपतिया के साथ जबरदस्ती का प्रयास होता है, तो गांव के सारे दलित इकट्ठा हो जाते हैं। सिर्फ इकट्ठा नहीं बल्कि उस लड़ाई में वे हर संकट का सामना करते हैं, इस लड़ाई को जीतने के लिए हर चीज का सहारा लेते हैं। उसमें उचित अनुचित का सवाल भी उतना प्रासंगिक नहीं लगता। उनके लिए वह सहारा उचित है जो उनके संघर्षों को धार दे सके। पहले थोड़ा अमूर्तन भी था। अब टोले का विभाजन दो प्रतिद्वंदियों के रूप में सामने खड़ा है। जातियों के समीकरण पहली कतार में आए हैं।

कहानी का वातावरण बदला है, गांव में सदियों से राज करते ठाकुर की ठकुराहट अब खतरे में आ गई है, सामंतों में खलबली है, सवर्ण व्यक्तियों के लिए अपनी प्रधानी छोड़कर किसी दलित को प्रधान के रूप में देख पाना असंभव है। कहानी के इस अंश को शिवमूर्ति ने इस प्रकार अभिव्यक्त किया है कि – ''गांव में जैसे भूडोल आ गया है। ऐसी एक बड़ी आबादी है जो आज भी जाति व्यवस्था को ब्रह्मा की लकीर मानती है। वह मानती है कि सवर्णों के गांव में दलित को परधानी की कुर्सी पर बैठाना सवर्णों के सिर पर बैठाना हुआ। लोहिया तो समाजवाद पाए लेकिन आज की सरकारें लगता है, ला के रहेंगी। किसी आदमी ने ऐसा किया होता तो उसका मुंह फोड़ देते। सरकारों का कोई क्या करें?''[9] कहानी का अंत दलितों के द्वारा सामंती सभ्यता को करारा जबाब देने से होता है। इससे अधिक और क्या बेहतरीन यथार्थपरक अंत हो सकता था।

जुल्मी –

'जुल्मी', 'कुच्ची का कानून' कहानी संग्रह की अंतिम कहानी है। जुल्मी 1970 के आसपास लिखी गई लेखक की शुरूआती रचना है। शिवमूर्ति की कथा यात्रा बड़ी ही मनमोहक रही। जुल्मी कहानी के द्वारा उनके पाठकों ने इतना जरूर समझा होगा कि उनकी कहानी यात्रा किस मोड़ से किस मोड़ तक आई है। उनके कहानी पात्रों के नाम हर दौर में पाठकों को तत्काल मोह लेने वाले होते हैं जो किसी न किसी रूप में साधारण जीवन शैली को अभिव्यक्त करते हुए भी प्रतीत होते हैं। जुल्मी कुछ हद तक ख्वाजा, ओ मेरे पीर, के कथ्य से साम्य भाव रखने वाली कहानी है। झूठे अहंकार से युक्त नव व्याहता कोईली के ससुराल वाले उसे अपने इकलौते भाई को देखने जाने की इजाजत नहीं देते, जो इस समय अस्पताल में भर्ती है। अब आखिरी आस केवल उसका पति ही है और पति वह है जो अपने पिता के विपरीत एक शब्द बोलने का साहस नहीं कर पाता। मरणासन्न अवस्था में पड़े भाई से मिलने को कोईली आतुर हुई जा रही है। आखिरकार जब किसी भी प्रकार से उसे भाई से मिलने की इजाजत नहीं मिलती तो वह बिना किसी की सहमति के अपने मायके चली जाती है जिससे नाराज ससुराल वाले भाई की तेरहवीं में आते हैं लेकिन उसे विदा कराने नहीं आते। दोनों ही पक्ष अपने–अपने झूठे मान सम्मान में अड़ जाते हैं। माता–पिता इसीलिए कोईली को ससुराल नहीं भेजते कि किसी का एक बार न्यौता तो आए और ससुराल वाले अपने आप उसे लेने नहीं आते। पति चाहकर भी कुछ नहीं कर पाता। दोनों के झूठे अंहकार के मध्य पति–पत्नी अलग हो जाते हैं। 8 साल बाद कोईली के द्वार पर उसके पिता उसके लिए दूसरा वर ढूंढ लाते हैं और उसके साथ उसे विदा कर दिया जाता है। कोईली अपने दूसरे पति के घर चली जाती है पहले पति की यादों को अपने हृदय में समेटे हुए। 15 साल बाद मेले में उसकी बुआ उसे पहले पति से मिलवाती है जिसे देखकर दोनों अपने जीवन के खटटे–मीठे पल बांटना प्रारंभ

कर देते हैं। उन्होंने क्या खोया? क्या पाया? इसकी यादें प्रारंभ हो जाती है और इसी के साथ–साथ कहानी समाप्त हो जाती है।

निष्कर्ष –

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि शिवमूर्ति की कहानियों की कथावस्तु यह सोचने के लिए विवश कर देती है कि जो वातावरण हमारे चारों ओर है वह क्या है? क्यों है? और किसलिए है? क्या कारण है कि स्त्री विडम्बनाओं को सहन करती चली जाती है। क्यों चारों ओर की व्यवस्थाएं उसके जीवन की वास्तविक खुशियों को उससे छीन लेती है? वह अपने जीवन में स्वतंत्र होकर अपने अधिकारों के लिए जी नहीं पाती। पग पर उसका शोषण क्यों होता है? क्या हमारा समाज इतना निर्मम और इतना निर्दई है कि समाज के एक पहलू नारी को सिरे से नकार देता है। एक शिक्षित समाज में नारी की यह उपेक्षा असहनीय है। इन्हीं संवेदनाओं को साथ लेकर शिवमूर्ति अपनी साहित्य यात्रा पर चलते हैं। यही कारण है कि उनकी कहानियां प्रत्येक पाठक को अपने आसपास की कहानी लगती है और वह उनसे अपनेपन के साथ जुड़ जाता है। वास्तव में शिवमूर्ति का साहित्य चिंतनीय है, स्मरणीय है और अवलोकनीय है।

संदर्भ –

[1] शिवमूर्ति – केशर कस्तूरी, पृष्ठ 19
[2] शिवमूर्ति – केशर कस्तूरी, पृष्ठ 19
[3] शिवमूर्ति – केशर कस्तूरी, पृष्ठ 68
[4]शिवमूर्ति – केशर कस्तूरी, पृष्ठ 68
[5] शिवमूर्ति – केशर कस्तूरी, पृष्ठ 169
[6] शिवमूर्ति – केशर कस्तूरी, पृष्ठ 162
[7] शिवमूर्ति – कुच्ची का कानून, पृष्ठ 118
[8] शिवमूर्ति – कुच्ची का कानून, पृष्ठ 9
[9] शिवमूर्ति – कुच्ची का कानून, पृष्ठ 39